भारत और विदेशों में विज्ञान पत्रकारिता

SCIENCE JOURNALISM IN INDIA AND ABROAD

☐ DR. JAYANT V. NARLIKAR

प्रस्तावना

वर्ष 1976 में मैंने दिल्ली में 10 वीं जवाहरलाल स्मृति व्याख्यानमाला में व्याख्यान दिया था। इसकी अध्यक्षता तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने की थी। मेरे व्याख्यान का विषय था 'विज्ञान और समाज के विकास में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की भूमिका'। इस व्याख्यान का उद्देश्य इसे सार्वजनिक बनाना था और बाद में इसकी प्रतियां मुफ्त में बांटी गईं। परंतु व्याख्यान के अंत में एक समाचार पत्र के सम्वाददाता इसे लिखित रूप में लेने के लिए मेरे पास आए।

'जीं हां मैं जानता हूं' उन्होंने अपने बैग से एक प्रतिलिपि निकालते हुए विनम्रता से कहा।

मैंने पूछा 'तो फिर समस्या क्या है?'

'जी, मैंने इस व्याख्यान की 100 शब्दों में सूचना देनी है परंतु समझ नहीं पा रहा हूं इसे कैसे संक्षिप्त बनाया जाए। आपने जो कहा, क्या आप उसे संक्षेप में बताने की कृपा करेंगे?'

यह घटना देश में विज्ञान रिपोर्टिंग की निराशाजनक स्थिति को प्रदर्शित करती है। जैसा कि हर मामले में होता है, वास्तव में कुछ अपवाद भी हैं जो मानदंड से ऊपर उठकर अच्छा कार्य करते हैं। परंतु मानदंड इतने निम्न स्तर पर क्यों होने चाहिए? एक और उदाहरण है। एक अमरीकी खगोलशास्त्री ने 'खगोलशास्त्र में हिंसा' पर मुम्बई में एक सार्वजनिक व्याख्यान दिया। उसने खगोलशास्त्रीय वस्तुओं पर अनेक स्लाइडों की सहायता से सरल भाषा में बताया कि किस प्रकार आकाशगंगा (गैलेक्सी) के केन्द्रीय (नाभिकीय) क्षेत्र हिंसात्मक गतिविधियों जैसे विस्फोट, पदार्थ उत्क्षेपण, आदि, को प्रदर्शित करते हैं। उसने एक अनुमान का उल्लेख किया कि अति सघन चमकीली वस्तुओं के रूप में ज्ञात क्वासर ऐसी ही सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्ली से उत्पन्न किए गए हैं।

अगले दिन एक अग्रणी अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र ने घोषणा की कि वैज्ञानिक के अनुसार आकाशगंगाएं क्वासर्स में विस्फोटों से उत्पन्न होती हैं।

संवाददाता का प्रशिक्षण स्तर क्या था (या नहीं था) मैं इस बात को नहीं समझ पाया कि उसने इस प्रकार की त्रुटि क्यों की और क्वासर्स तथा आकाशगंगाओं की भूमिका को उलट कर रख दिया।

इसी पृष्ठभूमि में मैंने भारत में विज्ञान पत्रकारिता पर अपनी टिप्पणियां देने का साहस किया है। परंतु इससे पहले मैं एक साधारण व्यक्ति की आशंका के बारे में जो लगभग सार्वभौमिक

Introduction

In 1976 I delivered the 10th Jawaharlal Nehru Memorial lecture in Delhi. The then Prime Minister, Smt. Indira Gandhi, was in the chair. The topic of my lecture was 'The Role of Scientific Outlook in the Development of Science and Society'. The lecture was meant to be a public lecture and its copies were freely distributed afterwards. However, at the end of the lecture, when I was leaving a newspaper reporter approached me for a written version.

I pointed out to him that copies of the entire talk were available then and there.

"I know it, Sir" he replied politely producing a copy from his bag.

"So what is the problem?" I asked.

"Well, Sir! I have to report the lecture in 100 words and I do not know how to shorten it. Could you tell me in a few words, what you said?"

This incident illustrates the dismal state of science reporting in the country. As in every case, there are a few exceptions, of course, who rise above the norm and are able to make a good job of it. But why should the norm be so low?

Take another example. A U.S. astronomer gave a public lecture in Mumbai on 'Violence in Astronomy'. He discussed in a simple language with a lot of slides of astronomical objects how the central (nuclear) regions of galaxies show evidence of violent activity such as explosions, ejection of matter, etc. He mentioned a conjecture that quasars, known to be highly compact bright objects might have been ejected by such active galactic nuclei.

The next day a leading English national daily announced that the scientist said that galaxies are ejected by explosions in quasars!

Whatever might be the reporter's training (or lack of it) I find it hard to understand how he could make this type of mistake of simply reversing the roles of quasars and galaxies.

It is against this background that I have ventured to set forth my comments on science journalism in India. But

है कुछ कहना चाहता हूं कि वह विज्ञान से सम्बंधित किसी भी बात को सोचने समझने की पर्याप्त क्षमता नहीं रखता।

हमारे विद्यालयों में विज्ञान का शिक्षण इस तरह से होता है कि छात्र उसे एक रहस्यपूर्ण विषय के रूप में देखता है जिसे कंठस्थ करना है और जैसे का तैसा उत्तर पुस्तिका में उतार देना है, यह एक तोता रटंत की तरह है। इसमें न तो विज्ञान का रोमांच होता है न अनसुलझे प्रश्नों की पीड़ा होती है, न सही उत्तरों के पाने का आनंद आदि होता है। उसे ऐसा नहीं बताया जाता। इस प्रकार स्कूल छात्र प्रौढ़ हो जाते हैं और विज्ञान से पिण्ड छुड़ा लेते हैं। स्कूल में वह ऐसा ही कुछ सीखते हैं और इसे छोड़कर राहत महसूस करते हैं।

मुझे संस्कृत के एक आदरणीय प्रोफेसर की याद आती है जिनसे पुणे में 'वसंत व्याख्यान माला' में मेरी वार्ता से पहले मुलाकात हुई थी और उन्होंने कहा था 'मैं आपकी वार्ता सुनने को तत्पर हूं – भले ही मुझे उसका सिर पैर कुछ भी समझ में न आए'। मेरी वार्ता का विषय था 'आज से 100 वर्ष बाद जीवन कैसा होगा'? भले ही मैं यह कहता कि मैं अपनी कहानी सुनाने जा रहा हूं तब भी मुझे पूरा विश्वास है उनकी प्रतिक्रिया ऐसी ही होती। जिनकी वैज्ञानिक पृष्ठभूमि नहीं है ऐसे शिक्षित प्रौढ़ व्यक्तियों की मनःस्थिति यह रहती है कि विज्ञान को समझना बड़ा कठिन है और वैज्ञानिक जो भी बोलते हैं उसे समझा नहीं जा सकता। अतः उनके सामने विज्ञान को प्रस्तुत करना इतना आसान नहीं है।

वास्तव में विज्ञान पत्रकारिता का अर्थ केवल विज्ञान का सरलीकरण और उसे सामान्य व्यक्ति को समझाना ही नहीं है। यह क्या है उसे मैं आगे बताना चाहता हूं।

विज्ञान का युग

अधिकतर यह कहा जाता है कि हम विज्ञान के युग में रह रहे हैं और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हमारे जीवन को संवार रहे हैं। आल्विन टाफलर ने 'दि फ्यूचर शॉक' नामक अपनी पुस्तक में इसका सजीव चित्रण किया है। उन्होंने बताया है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी किस प्रकार हमारे जीवन में अधिक से अधिक और तीव्रता से घुलमिल गए हैं जिसका सारांश मैं अपने शब्दों में नीचे दे रहा हूं।

इस पृथ्वी ग्रह में मानव अस्तित्व के 50,000 वर्षों को 800 मानव जीवन अवधियों में बांटा जाए तो प्रत्येक जीवन अवधि का औसत

before I do so, let me say something about the almost universal fear felt by the layman that he is not sufficiently equipped to understand and appreciate anything that has to do with science.

Thanks to the way science is taught in our schools, a typical student looks upon it as a mysterious subject which is to be memorised by heart and reproduced ditto, much as a parrot trained to speak words and sentences does. None of the thrills of science, the agonies of unsolved problems, the ecstasies of finding the right solutions, etc., are conveyed to him or her. So the school children grow into adults who are happy to be relieved of the burden of science. It is something they were made to learn at school and are now glad to leave behind.

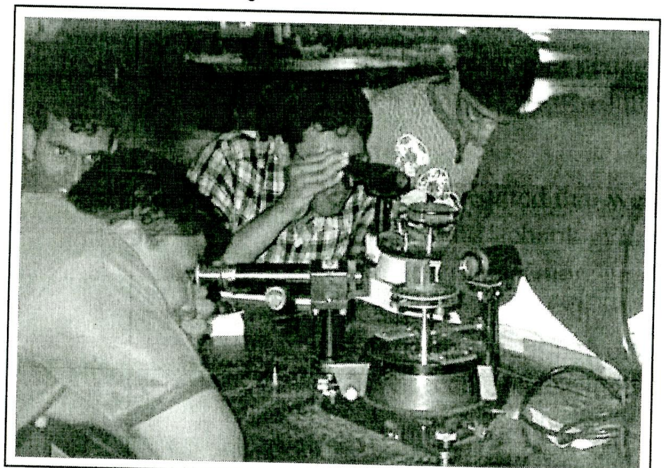

Students engrossed in a laboratory experiment

I can still see the venerable professor of Sanskrit who accosted me before my talk at the 'Vasant Vyakhyanmala' in Pune with the remark, "I am looking forward to your talk, not that I will understand any of it." The topic of my talk was 'What would life be like hundred years hence?' I am sure, if I announce that I was reading out a story of mine, the reaction would have been the same. Even educated adults of non-scientific background have a complex that science is too difficult to understand and that whatever the scientist talks about will be unintelligible. So to project science to them is not going to be easy to start with.

Indeed science journalism does not mean only simplifying science and explaining it to the layman. It is not, I repeat, not an exercise in pedagogy. What does it cover, then? This is what I wish to outline next.

The age of science

It is often stated that we live in the age of science, that science and technology are shaping our very existence. No one described it more graphically than Alvin Toffler in his book 'The Future Shock'. I summarise below in my own words his description of the way science and technology have become increasingly rapidly integrated in our lives.

Divide the last 50,000 years or so of known human existence on this planet into some 800 human life spans -

62.5 आता है। इनमें से पहले 650 जीवन अवधियाँ मनुष्य ने गुफाओं में आदिम दशाओं में बिताए गए। लेखन कला 70 जीवन अवधियों से अधिक पुरानी नहीं है और चित्रकला तो केवल 6 जीवन अवधि पुरानी है। इलैक्ट्रिक मोटर केवल दो जीवन अवधि पुरानी है। वास्तव में हम दैनिक जीवन में जिन अधिकांश वस्तुओं का उपयोग करते हैं उनकी प्रौद्योगिकी काफी कम समय की है, इनमें से कुछ तो केवल एक जीवन अवधि पुरानी है। परमाणु ऊर्जा की खोज, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का उपयोग और कम्प्यूटरों का प्रचलन एक जीवन अवधि से भी कम समय का है।

यह इस बात को प्रदर्शित करता है कि वैज्ञानिक विचार कितनी तेजी से प्रौद्योगिकी आविष्कारों में परिणित हो रहे हैं और हम कितनी तेजी से इन्हें अपने जीवन में आत्मसात कर रहे हैं। फिर भी यह सब जितनी तेजी से घटित हो रहा है वह समाज के लिए पूर्ण रूप से लाभदायक सिद्ध नहीं हो रहा है। यह स्थिति कुछ इस प्रकार की है जैसे मनुष्य के सामने शीघ्रता से एक के बाद एक खाने के लिए स्वादिष्ट व्यंजन परोसे जांए और उसे शीघ्र से शीघ्र खाने का प्रलोभन दिया जाए। ऐसी दावत बड़ी आश्चर्यजनक लगेगी परंतु खाने वाले को अपने स्वास्थ्य और हाजमे की स्थिति को ध्यान में रखते हुए भोजन की वस्तुएं चुननी चाहिए। परंतु मानव समाज ऐसा नहीं कर पाया है।

ऊपर के उदाहरण में दावत खाने वाला यह पूछ सकता है 'मुझे क्या पता मेरे लिए क्या चीज अच्छी है, इसकी कितनी मात्रा मेरे लिए अच्छी है और मुझे कौन सी चीज खानी चाहिए?' उसे कौन बताएगा? यही वह जगह है जहां विज्ञान पत्रकारिता को अपनी भूमिका अदा करनी है। मैं कुछ विशेष उदाहरणों का संक्षेप में उल्लेख करूंगा।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी अनुसंधान के लिए सहायता मुख्यतः विभिन्न देशों की सरकारों द्वारा दी जाती है यद्यपि देशों की अर्थव्यवस्था की स्थिति के आधार पर निजी क्षेत्र भी इसमें अपना आंशिक योदान करते हैं। इस प्रकार समग्र रूप से करदाता इन निधियों का मुख्य स्रोत होता है। इन निधियों पर उसका नियंत्रण किस सीमा तक होना चाहिए? एक सुनहरे भविष्य को सुनिश्चित करने के लिए आज हम एक विवेकपूर्ण सामूहिक निर्णय किस प्रकार ले सकते हैं?

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में जितनी तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं उसे देखते हुए आज से दस साल बाद की उसकी स्थिति की भविष्यवाणी करना आसान नहीं है। फिर भी, भविष्य में क्या होगा उसका कुछ आकलन करना योजना बनाने के लिए आवश्यक है। उदाहरण के लिए वर्ष 1986–89 के दौरान स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी द्वारा स्थापित प्रधानमंत्री की विज्ञान सलाहकार परिषद् ने ऐसा ही कार्य किया था। 'वर्ष 2001 के लिए भावी योजना का दृष्टिकोण' नामक एक पत्र में

each life span comprising of 62.5 years. Of these, the first 650 or so were spent by man in primitive conditions in the caves. The art of writing is not more than 70 life spans old and that of printing only 6 life spans old. The electric motor is two life spans old. In fact most of the things we use in our daily existence involve technology much younger, some of it not more than one life span old. The discovery of atomic energy, use of space technology and the proliferation of computers are all less than a life span old.

This indicates how rapidly scientific ideas are being translated into technological inventions and how rapidly we are assimilating them in our lives. Yet the rapidity with which this is taking place is not proving entirely beneficial to the society. Rather, the situation resembles that of a human being confronted with a feast of excellent eatables served in rapid succession and tempted to eat them as fast as they come. The banquet may look dazzling but the diner ought to pick and choose keeping in mind his limitations of health and capacity to digest. This the human society has not managed to do.

The diner in the above example may ask, 'How do I know what is good for me - how much of it is good for me - and what items I should avoid?' Who is to tell him? This is where science journalism has a role to play. I shall shortly discuss a few typical examples.

The support for research in science and technology is broadly by the governments of the different countries, although private sector also contributes small fractions depending on the economies of the countries. So by and large the taxpayer is the ultimate source of the funds. To what extent should he or she exercise control on the funding? How do we make wise collective decisions today to ensure a better tomorrow?

With the rapid changes taking place in science and technology, forecasting their status even ten years from now is not easy. Yet some assessment of how things will go in the future is necessary for planning. For example, the Science Advisory Council to the Prime Minister set up by the late Prime Minister Rajiv Gandhi during 1986-89 undertook such an exercise. In a paper entitled 'An Approach to a Perspective Plan for 2001' the Council said:

"It is clear to us that not everything that we plan can be accomplished by government machinery alone. We need to fully exploit the potential of voluntary movements in crucial areas such as population control, family welfare, school

परिषद् ने कहा था–

'हम इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि हम जिस चीज की भी योजना करते हैं वह सारा केवल सरकारी मशीनरी से पूरा नहीं किया जा सका। हमें जनसंख्या नियंत्रण, परिवार कल्याण, स्कूल शिक्षा और प्रौढ़ साक्षरता जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में स्वैच्छिक आंदोलनों की क्षमता को पूर्ण रूप से उपयोग में लाने की जरूरत है। यह सम्भव है कि इनमें से अनेक कार्य निष्ठावान नागरिकों विशेषकर हमारे समाज के लाभ के लिए पूर्ण रूप से अभी तक उपयोग में न लाई गई शिक्षित महिलाओं द्वारा बेहतर रूप से पूरे किए जा सकते हैं।'

इस तरह हमारे पास विज्ञान पत्रकारिता के लिए दूसरी संभावित भूमिका यह भी है कि लोगों को भावी संभावनाओं के बारे में प्रेरित किया जाए ताकि वह उनके लिए अपने को तैयार कर सकें और अब दूरगामी विवेकपूर्ण निर्णय ले सकें। मैं इस विषय पर बाद में चर्चा करूंगा।

वैज्ञानिक घटनाओं की रिपोर्टिंग

आज प्रौद्योगिकी चमत्कार के रूप में जो दिखाई देता है उसकी जड़ें भूतकाल की किसी वैज्ञानिक खोज में होती हैं। अधिकतर ऐसी खोजों को उपेक्षित रखा जाता है और प्रौद्योगिकी चमत्कार को प्रकाश में लाया जाता है। वास्तव में खोज करते समय खोजकर्ता या उसके समकालीन व्यक्तियों के मन में ऐसा कोई विचार नहीं होता कि इस खोज या घटना का क्या प्रभाव होगा। ऐसे कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं।

1 विमान असंभव हैं

यह प्रदर्शन मशीनरी के ज्ञात रूपों और बल के ज्ञात रूपों के किसी भी संभावित संयोजन से ऐसी कोई व्यावहारिक मशीन नहीं बनाई जा सकती जिसके द्वारा व्यक्ति आसमान में लंबी दूरी तक उड़ सके' लेखक को उतना ही पूर्ण लगता है जितना किसी भौतिक तथ्य के प्रदर्शन के लिए सम्भव है।

साइमन न्यूकंब 1835–1909

2 प्रत्यावर्ती धाराएं किसी भी उपयोग के लिए खतरनाक

ऐसा कोई तर्क नहीं जो इस बात को सही सिद्ध करे कि वैज्ञानिक या वाणिज्यिक रूप में अति शक्तिशाली हाई टेंशन और प्रत्यावर्ती धाराओं का उपयोग हो सकता है। तांबे के तारों और भूमि भवन में निवेश कम करने के लिए ही उनका उपयोग किया जाता है।

education and adult literacy. It is likely that many of these tasks are better executed by motivated citizens, especially the educated women who are not yet fully utilised for the benefit of our society."

So here we have another possible role for science journalism - that of motivating the people about future prospects so that they are prepared for them and can take far reaching wise decisions now. I shall return to this aspect later.

Reporting on scientific events

What appears as a technological marvel today has roots in some scientific discovery in the past. Very often the former is ignored while the latter is highlighted. In fact while the discovery was made the discoverer or his contemporaries had no idea what the implications of the development would be. Here are a few examples.

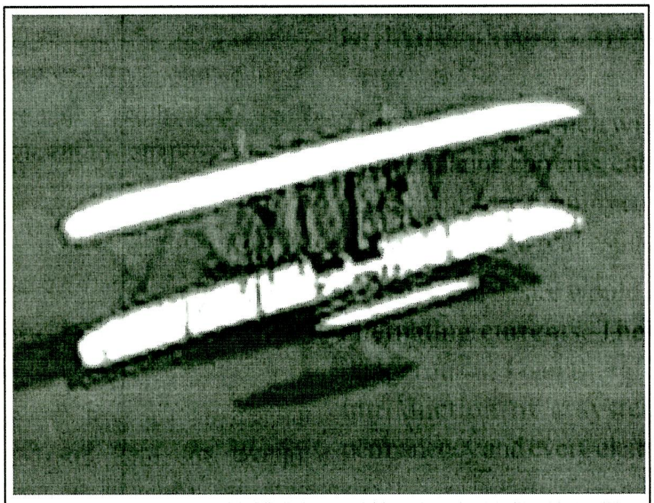

An early design of an aircraft

(i) Aircrafts are impossible

The demonstration that no possible combination of known substances, known forms of machinery and known forms of force, can be united in a practical machine by which man shall fly long distances through the air, seems to the writer as complete as it is possible for the demonstration of any physical fact to be.

Simon Newcomb (1835-1909)

(ii) Alternating currents are too dangerous to be of any use

There is no plea which will justify the use of high tension and alternating currents, either in a scientific or a commercial sense. They are employed solely to reduce investment in copper wire and real estate.

My personal desire would be to prohibit entirely the use of alternating currents. They are unnecessary as they are dangerous ... I can therefore see no justification for the introduction of a system which has no element of permanency and every element of danger to life and property.

I have always consistently opposed high-tension and alternating systems of electric lighting, not only on account

मेरी व्यक्तिगत इच्छा यही होगी कि प्रत्यावर्ती धाराओं का उपयोग पूर्ण रूप से रोक दिया जाए। वह अनावश्यक है क्योंकि वह खतरनाक हैं... अतः मुझे ऐसी प्रणाली शुरू करने का कोई औचित्य नहीं दिखाई देता जो स्थायी न हो और जीवन एवं सम्पत्ति के लिए खतरनाक हो।

मैंने हाईटेंशन और प्रत्यावर्ती विद्युत प्रणालियों का हमेशा विरोध किया है जिसका कारण खतरे का होना ही नहीं है बल्कि इसका कारण किसी सामान्य वितरण प्रणाली के लिए उनकी आम अविश्वसनीयता एवं अनुपयुक्तता का होना भी है।

थामस अल्वा एडीसन 1889

अंतरमहाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्रों को बनाना कठिन है

3000 मील तक मार करने वाले हाईऐंगल राकेट के बारे में काफी अधिक कहा जा चुका है। मेरे विचार से ऐसी वस्तु अनेक वर्षों तक असम्भव है। जो लोग ऐसी बातें लिख रहे हैं उनसे मुझे दुख पहुंचता है, वे बात करते हैं एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप पर 3000 मील तक की मार करने वाले हाई एंगल राकेट, जो परमाणु बम से सज्जित हो और ऐसा एक सही हथियार हो जो किसी शहर आदि जैसे एक निश्चित लक्ष्य का भेदन कर सके।

तकनीकी रूप से मेरा कहना है कि विश्व में ऐसी वस्तु बनाने वाला कोई जानकार नहीं है और मेरा विश्वास है कि आने वाले लंबे समय तक ऐसा कुछ नहीं हो पाएगा... हमें ऐसा सोचना ही छोड़ देना चाहिए, मैं आशा करता हूं कि अमरीकी जनता यह सोचना छोड़ देगी।

वन्नेवर बुश 1945

4. परमाणु बम का कभी विस्फोट नहीं होगा

यह हमारे लिए आज तक की सबसे बड़ी बेवकूफी वाली बात होगी। बम कभी नहीं फूटेगा और मैं विस्फोटक विशेषज्ञ के रूप में यह कह रहा हूं।

एडमि. विलियम लीही ने राष्ट्रपति ट्रूमैन से कहा था 1945

फिर भी, ऐसे अनेक मामले हैं जहां खोज के भावी परिणामों की कल्पना की जा सकती है। निहित परिणाम व्यावहारिक नहीं हो सकते, वह विशुद्ध ज्ञान की प्रगति को प्रदर्शित कर सकते हैं। जब स्टीफन हाकिंग ने यह पाया कि ब्लैक होल ऊर्जा का विकिरण कर सकता है और करता है तो इस परिणाम का ब्लैक होल के समीप किस प्रकार क्वांटम प्रक्रिया सुदृढ़ रूप से वलयित अंतरिक्ष

of danger, but because of their general unreliability and unsuitability for any general system of distribution.

Thomas A. Edison (1889)

(iii) Intercontinental ballistic missiles are too hard to make

There has been a great deal said about a 3000 miles high-angle rocket. In my opinion such a thing is impossible for many years. The people who have been writing these things that annoy me, have been talking about a 3000 mile high-angle rocket shot from one continent to another, carrying an atomic bomb and so directed as to be a precise weapon which would land exactly on a certain target, such as a city.

I say, technically, I don't think anyone in the world knows how to do such a thing, and I feel confident that it will not be done for a very long period of time to come.., I think we can leave that out of our thinking, I wish the American public would leave that out of their thinking.

Vannevar Bush (1945)

(iv) The atomic bomb will never explode

That is the biggest fool thing we have ever done. The bomb will never go off, and I speak as an expert in explosives.

Adm William Leahy to President Truman (1945)

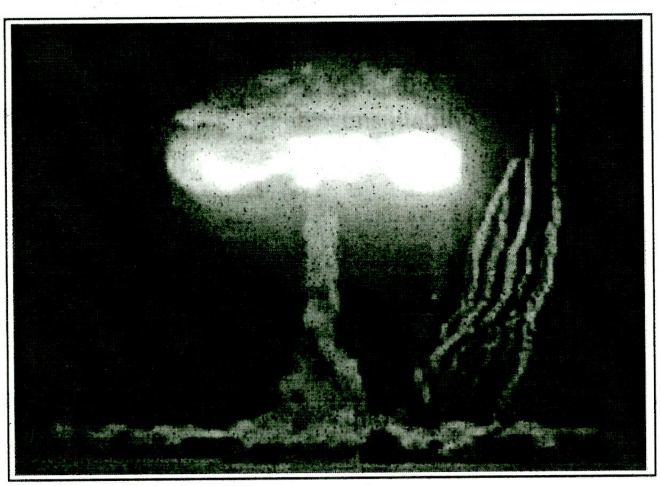

Nuclear explosion

Nevertheless, there are a number of cases where the future implications of the discovery can be imagined. The implications many not be practical; they may represent advance in pure knowledge. When Stephen Hawking found that a black hole can (and does) radiate energy, the result was hailed as an important advance in our understanding of how quantum processes operate in the strongly curved spacetime, near black holes for example. Why did the scientists feel excited by the result even though there was no chance of observing it in operation now?

There are occasions, on the other hand, where a new discovery, serendipitous though it is, opens out numerous technological fall outs. The discovery of high temperature superconductivity was of this kind.

समय में संचालित होती है, के बारे में स्वागत किया गया। इस परिणाम से हमारे वैज्ञानिक क्यों उत्तेजित हुए जबकि अब इसे प्रचालन में देखने का कोई अवसर नहीं था।

दूसरी ओर ऐसे भी अवसर आते हैं जब नई खोज, यद्यपि यह आकस्मिक होती है, असंख्य प्रौद्योगिकी घटनाओं के द्वारा खोलती है। उच्च तापमान अतिचालनता की खोज इसी प्रकार की थी।

मैं जो बात बताना चाहता हूं वह यह है कि दोनों प्रकार की वैज्ञानिक घटनाएं आम आदमी तक पहुंचाने के योग्य होती हैं। वह इसकी बारीकियों को नहीं समझेगा परंतु उसे सृजनता के आनंद प्रकृति के रहस्यों को उद्‌घाटित करने, भावी अनुप्रयोगों के अवसरों आदि का लाभ प्राप्त करने का मौका दिया जाना चाहिए, ऐसी रिपोर्टिंग विज्ञान को एक और कदम आगे मानवता के पास ले जाती है और एकांतता से एक कदम दूर भी ले जाती है जहां मानवता ने इसे रख छोड़ा है।

वैज्ञानिक धोखाधड़ी

आजकल खोजी पत्रकारिता के अंतर्गत भ्रष्टाचार, अपराध, जासूसी, षडयंत्र और युद्ध कहानियों के अनेक मामले आते हैं। कभी कभी वैज्ञानिक दुनिया भी चुनौतीपूर्ण और अति रोचक मामले प्रस्तुत करती है। एक विशिष्ट मामले में महत्वपूर्ण खोज का दावा किया गया परंतु बिना किसी उचित प्रमाण के। कुछ स्थितियों में परिणाम धोखाधड़ी पर आधारित होता है जबकि कुछ अन्य मामलों में यह एक वास्तविक त्रुटि भी होती है।

प्रतिष्ठित फ्रेंच भौतिकीविद् आर. ब्लांडलॉ ने 1903 में एक नये किस्म के विकिरण एन किरण नैन्सी शहर के नाम पर जहां यह खोज की गई मानी जाती हैद्ध की खोज का दावा किया। जर्मनी में एक्स–रे की खोज के थोड़े ही समय बाद महत्वपूर्ण गुणों वाली इन किरणों की खोज का फ्रांस में अत्यधिक स्वागत किया गया जिसका एक कारण विज्ञान सहित अनेक क्षेत्रों में दो पड़ोसी देशों के बीच प्रतिस्पर्धा भी था। एन–किरणें प्रचलित हो गई और फ्रांसीसी पत्रिकाओं में बड़ी संख्या में शोध पत्र आने लगे। शीर्घ ही ब्लांडलाट को इस खोज के लिए फ्रैंच अकादमी द्वारा प्रतिष्ठित ललाण्डे पुरस्कार प्रदान किया गया।

फिर भी हर वैज्ञानिक परीक्षण ऐसा होना चाहिये कि उसे बार बार दोहराया जा सके। एन–किरणों के मामले में ऐसा नहीं हो रहा था। इंगलैंड और जर्मनी में ऐसे ही परीक्षणों में किरणों का पता नहीं लगा। इसमें कहां गलती थी? इसका पता लगाने के लिए ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने एक नामी अमरीकी वैज्ञानिक आर डब्ल्यु वुड को ब्लांडलॉ की प्रयोगशाला का दौरा करने और परीक्षण का निरीक्षण करने को कहा। वुड ने दौरा किया और यह पाया कि एन–किरणों का दावा एकदम झूठा था। उसने इस धोखाधड़ी का कैसे पता लगाया यह एक

The point, I wish to make is, that scientific events of either kind are worth reporting to the layman. He may not appreciate the details but he should be given a chance to capture the excitement of creativity, of unravelling one of nature's secrets, of the vista of future applications, etc., such reporting brings science one step closer towards humanity - a step away from the ivory tower in which humanity has placed it.

Scientific frauds

Investigative journalism covers these days many cases of corruption, crime, spying, conspiracy and war stories. Once in a while the scientific world too offers challenging and highly interesting cases. In a typical case, a claim to an important discovery is made but without proper substantiation. In some situations the result is based on fraud while in others it is a genuine mistake.

In 1903 the eminent French physicist R. Blondlot claimed to have discovered a new type of radiation called N-rays (N for the town Nancy where the discovery was supposedly made). Coming shortly after the discovery of X-rays in Germany, this discovery of rays with remarkable properties was hailed widely in France partly because of the competition between the two, neighbouring countries in many fields including science. The N-rays became fashionable a large number of research papers began to appear in French journals. Soon Blondlot was awarded the prestigious Lalande Prize by the French Academy for this discovery.

However, a scientific experiment should be repeatable. This was not happening in the case of N-rays. The rays could not be detected in similar experiments in England or Germany. What was wrong? To find out British scientists asked R.W. Wood, a distinguished American scientist to visit Blondlot's laboratory and inspect the experiment. Wood made the trip and found that the claim for Nrays was totally false. His own account of how he detected this fraud makes a very interesting reading even for the layman.

The temptation to make spectacular but fraudulent claims comes more strongly in the present times than in the relatively placid times of the turn of this century. This is because a scientist is judged by his performance much more stringently today than in the last century. Awards, peer support, promotions, project grants are all linked with performance. Thus if Mr. X has made a stupendous discovery he stands to attract a lot of financial support as

आम आदमी के लिए भी बड़ी रोचक कहानी है।

महत्वपूर्ण परंतु धोखाधड़ी दावे करने का प्रलोभन इस शताब्दी के प्रारंभ के शांत समय की तुलना में आज के समय में काफी अधिक है। इसका कारण यह है कि पिछली शताब्दी की तुलना में आज वैज्ञानिक को उसके कार्य निष्पादन की दृष्टि से अधिक सक्ष्ती से आंका जाता है। पुरस्कार, साथियों का सहयोग, पदोन्नति, परियोजना अनुदान यह सभी कार्य निष्पादन से जुड़े हैं। इस प्रकार यदि किसी ने कोई आश्चर्यजनक खोज की हो तो उसे वित्तीय सहायता के साथ साथ वैज्ञानिक समाज में शक्ति या सत्ता का मिलता लाजिमी है। इसीलिए इस कार्य में कूद पड़ना और अपरिपक्व घोषणाएं करना उसके लिए प्रोत्साहन है। इन सभी प्रलोभनों के बावजूद विज्ञान अपेक्षतया फिर भी साफ सुथरा रहा है जिसका कारण यह है कि देर सबेर वैज्ञानिक धोखाधड़ी का पता लगा लिया जाता है। फिर भी ऐसे मामले समय समय पर आते रहते हैं जिनकी सूचना जनता तक व्यापक रूप से पहुंचाने की जरूरत है।

खोजी पत्रकारिता का दूसरा सम्बंधित क्षेत्र जिसमें काफी कार्य किया जा सकता है, पृथ्वी से बाहर के अंतरिक्षयानों के रूप में यू.एफ.ओ. के दावों की जांच करना है। एक आम आदमी इन सुझावों से आश्चर्यचकित हो जाता है कि यह अंतरिक्षयान हमारी पृथ्वी से बाहर किन्हीं अन्य सभ्यताओं के हैं। वाशिंगटन डीसी के पत्रकार फिलिप क्लास ने 'यूएफओ एक्सप्लेन्ड' नामक अपनी पुस्तक में खोजी पत्रकारिता के सुंदर विवरण दिए हैं जिनसे हमारे आसपास के अनेक ऐसे दावों के रहस्यों से परदा उठा है। उसने यह भी प्रदर्शित किया है कि तथाकथित फोटो वाले प्रमाण किस प्रकार झूठे हो सकते हैं। वास्तव में कुछ मामलों में यूएफओ को देखना धोखाधाड़ी के द्वारा भौतिक लाभ पाने के रूप में सिद्ध हुआ है।

चमत्कारों का असली रूप दिखाना और अंधविश्वासों से लड़ना

भारत की अपनी विशेष समस्याएं हैं। तथाकथित धर्मगुरु विज्ञान को लगभग चुनौती देते हुए चमत्कार दिखाकर भोलीभाली जनता का फायदा उठाते हैं और व्यक्तियों एवं समाज पर अत्याधिक बुरा प्रभाव कर सकाते हैं। वैज्ञानिक और जादूगर मिलजुल कर ऐसे मामलों के असल रूप को सामने लाकर महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। पत्रिकाएं इनसे अच्छी कहानियां प्राप्त कर सकती हैं।

RVPSP supported workshop in progress for training resource persons in demonstrating science behind so-called miracles

well as power in the scientific circles. So there is every incentive for him to rush out and make premature announcements. In spite of these temptations science has remained relatively clean mainly because a scientific fraud is detected sooner than later. However, such cases as do turn up from time to time need to be widely reported to the public.

Another related area where investigative journalism can do a lot is in testing the claims of UFO unidentified flying objects, as extra-terrestrial spacecrafts. The common man gets excited by the suggestion that these are spaceships from some other civilizations beyond our Earth. Philip Klass, journalist from Washington DC has written a book entitled 'UFOs Explained' in which he has given absorbing details of investigative journalism which removed the mystery around several such claims. He has also shown how the so-called photographic evidence can be faked. Indeed, in some cases the UFO sighting has been turned (fraudulently) to material gains.

Debunking miracles and fighting superstitions

India has a special problem of its own. The so-called holy men who take advantage of the gullible by producing miracles apparently defying science can wield considerable evil influence on individuals and the society. Scientists and magicians together can play a valuable role in debunking such cases. And the journals can get a good story out of it.

The nearest to this type of situation arose in the West with the advent of Uri Geller who claimed to have supernatural mental powers by which he could bend spoons at a distance. The fact that even scientists were initially fooled by him and that it took a magician (James Randi) to demonstrate the secret illustrates that considerable subtlety is involved in these deceptions and the claims have to be probed very carefully.

India is a curious mixture of scientific advance and traditional superstitions. Superstitions are deeply ingrained and cannot be eliminated overnight. They cannot be removed by dictat but can be countered by rational arguments. Take astrology, for example. Scientists have tested astrology in many different

यूरी गेलर के आगमन से पश्चिम में एकदम इससे मिलती जुलती स्थिति पैदा हुई जिसने अलौकिक मानसिक शक्ति रखने का दावा किया जिसके द्वारा वह दूर रखी चम्मचों को मोड़ सकता है। शुरू में उसने वास्तव में वैज्ञानिकों को भी बेवकूफ बना दिया और एक जादूगर जेम्स रैण्डी ने प्रदर्शित किया कि इन धोखों में अत्यधिक चालाकी छिपी हुई है और ऐसे दावों की बड़ी सावधानी से जांच करनी होगी।

भारत वैज्ञानिक प्रगति और पारम्परिक अंधविश्वासों का एक अनोखा मिश्रण है। अंधविश्वास की जड़ें बड़ी गहरी हैं और उन्हें एक रात में दूर नहीं किया जा सकता। उन्हें आदेश से दूर नहीं किया जा सकता बल्कि विवेकसम्मत तर्कों से इनका प्रतिकार करना होगा। उदाहरण के लिए ज्योतिषशास्त्र को लें। वैज्ञानिकों ने अनेक विभिन्न रूपों में ज्योतिषशास्त्र की जांच की है और इसे विज्ञान सम्मत नहीं पाया है। फिर भी इसमें आस्था रखने वाले को यह आश्वस्त करना कि मामला वास्तव में ऐसा है, आसान नहीं है। इसमें धैर्य की जरूरत है। विज्ञान पत्रकारिता सूचना उपलब्ध कर सकती है।

प्रौद्योगिकी आपदाएं और वरदान

प्रत्येक क्षेत्र में उच्च प्रौद्योगिकी के प्रवेश से आपदाएं भी हैं। जनवरी 1986 में चैलेंजर अंतरिक्ष यान में उड़ान भरते ही विस्फोट हो गया था। अमरीका के थ्री माइल आइसलैण्ड और रूस के चेर्नोबिल में तीन परमाणु रिएक्टरों में खराबी आने से नुकसानदायक विकरण का क्षरण हुआ। वर्ष 1984 की भोपाल त्रासदी के हमारे जख्म अभी भरे नहीं हैं। सिगनलों की खराबी के कारण अत्याधुनिक विमानों की दुर्घटनाएं अथवा उड़ान के शुरू में ही राकेटों की असफलताएं अथवा रेल दुर्घटनाएं होती हैं। शक्तिशाली दवाओं के नुकसानदायक अवांछित प्रभाव हो सकते हैं।

यह सूची बड़ी लंबी है। जब कभी भी ऐसी आपदा होती है तो विज्ञान के प्रति एक व्यापक प्रतिक्रिया होती है। आलोचक तर्क देते हैं– 'विज्ञान और प्रौद्योगिकी अपनाने से यही हाल होता है। इन सब को छोड़ो और पिछली शताब्दी के सीधे साधे जीवन की ओर लौट चलो'।

यह वही स्थिति है जहां तकनीकी विशेषज्ञों और पत्रकारों को एक साथ आने की जरूरत है। तुरंत इस बात का विश्लेषण करना और समाधान निकालना संभव नहीं हो सकता कि गलती क्या थी। जब कारण का पता लग जाता है तो भविष्य के लिए क्या सुधारात्मक उपाय या सावधानी आवश्यक है इसका स्पष्ट पता चल जाता है। अनेक मामलों में यह पता लगता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए प्रारंभिक आतंक शिशु को उसके नहाए हुए पानी के साथ बाहर फेंकने के समान है। अनिवार्य को भी फालतू के साथ फेंकने के समान है।

इन अधिकांश आपदाओं पर रोचक और सूचनापरक लेख लिखे

ways and found it devoid of any scientific basis. Yet, to convince the believer that this is the case is not easy. Patience is needed. And information, which science journalism can provide.

Technological disasters and boons

With high technology entering in every field there are disasters also. The space shuttle, Challenger exploded on take off in January 1986. The nuclear reactors in the Three Mile Island in the USA and in Chernobyl in Russia developed malfunctions that led to leakage of damaging radiation. The Bhopal gas tragedy of 1984 is still green in our memory. Sophisticated aircrafts crash or rockets fail to take off or railway accidents occur due to signalling faults. Potent medicines may turn out to have damaging side effects....

The list is long. Whenever such a disaster happens there is a popular reaction against science. Argue the critics, "Look this is what happens when you go in for science and technology. Abandon it all (they continue) and go back to the simple days of the last century."

This is where technical experts and journalists need to get together. It may not be possible to analyse and diagnose what went wrong immediately. When the cause has been found out it will become clear what corrective action or precaution is needed for the future. In most cases it will also turn out that the initial panic against science and technology was akin to throwing the baby along with the bath water.

There are interesting and informative articles written on most of these disasters. The problem is how to give them as wide a circulation as possible. A valuable contribution science journalism can make to science and technology is to mitigate fears of the irrational type, discuss what went wrong and point to where the fault lay. This may not be easy since there may be vested interests keen to suppress the truth.

Science dissemination at the popular level also should emphasise the positive aspects of science and technology. There are several ways of doing it. Take medicine, for example. Max Perutz in his book 'Is Science Necessary'! has given a list of highly creative persons in the arts and sciences who died young - in the days when science was yet to provide remedies that could have cured them - remedies that we take for granted today. Today science has provided quick channels of communication that are pressed into operation whenever natural disasters like cyclone, volcanic eruptions, earthquakes, etc., call for immediate help.

गए हैं। समस्या यह है कि यथा सम्भव इनको व्यापक रूप में किस तरह परिचालित किया जाए। विज्ञान पत्रकारिता इसमें जो बहुमूल्य योगदान कर सकती है वह अविवेकपूर्ण भय को दूर करना, जो गलती हुई थी और कहां हुई थी उसे बताना है। सत्य को दबाने के इच्छुक निहित स्वार्थों के कारण यह आसान कार्य नहीं हो सकता।

लोकप्रिय स्तर पर विज्ञान प्रसार को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के सकारात्मक पहलुओं पर जोर देना चाहिए। ऐसा करने के अनेक तरीके हैं। उदाहरण के लिए आयुर्विज्ञान को ही ले लीजिए। मैक्स पेरुट्ज ने अपनी पुस्तक 'इज साइंस नेसेसरी' में कला और विज्ञान के अति सृजनशील व्यक्तियों की सूची दी है जो अपनी जवानी में ही मर गए, उनके समय में तब तक विज्ञान उनके इलाज की दवाएं उपलब्ध नहीं करा पाया था, ऐसी दवाएं जिन्हें आज हम पूर्ण कारगर समझते हैं। आज विज्ञान ने संचार के ऐसे त्वरित माध्यम उपलब्ध करा दिए हैं जिन्हें हम चक्रवात, ज्वालामुखी फटने, भूकम्पों, आदि, जैसी प्राकृतिक आपदाओं के समय तुरंत सहायता के लिए उपयोग में लाते हैं।

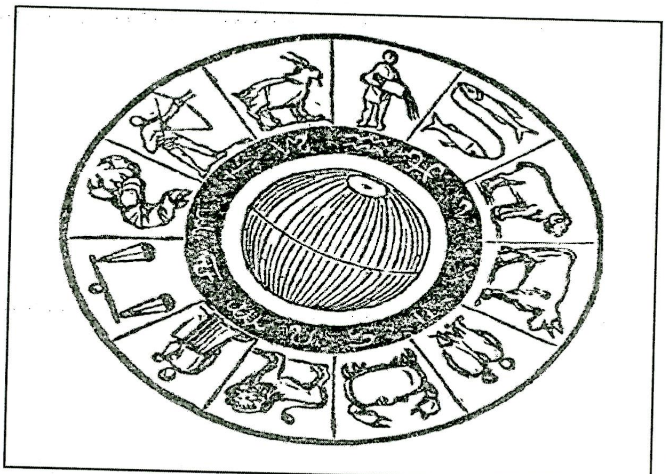

पाठक ऐसे चित्र हर दैनिक तथा पत्रिकाओं में देखते हैं और स्तम्भ

पत्रकार मेरे द्वारा ऊपर उल्लिखित नकारात्मक पहलुओं को छोड़कर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इन सकारात्मक पहलुओं को प्रकाश में ला सकते हैं भविष्य की कोई योजना बनाते समय इन पहलुओं को योजना की अनिवार्य सामग्री के रूप में उपयोग किया जा सकता है। हमारे देश में यह बातें योजना की बाहरी परिधि में ही रह जाती हैं क्योंकि योजनाकारों के मस्तिष्क में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उतनी गहरी पैठ नहीं है जितनी होनी चाहिए थी। अभी भी हमें दो तरह की स्थिति दिखाई देती है– वैज्ञानिक बातों को बंद बक्से में रखना और किसी पूर्ण समारोह किस्म के अवसरों पर इस बक्से को खोलना।

विज्ञान पत्रकारिता की आज की स्थिति

सबसे पहले हम पश्चिम के उन्नत देशों पर विचार करें। आर. हैनबरी ब्राउन ने 'द विजडम ऑफ साइंस' नामक अपनी पुस्तक में विज्ञान पत्रकारिता के बारे में लिखते हुए दुख प्रकट किया है कि ''यद्यपि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति ने रेडियो, टेलीविजन और अनेक पत्र पत्रिकाओं के द्वारा एक दूसरे के साथ संचार की अद्वितीय क्षमता प्रदान की है परंतु तथाकथित इस मीडिया का उपयोग हम विज्ञान की जानकारी के लिए कम ही करते हैं'।'' आगे वह कहते हैं: ''जहां तक पत्रकारिता का सम्बंध है, यह

The journalists can highlight these positive aspects of science and technology besides the negative ones I mentioned earlier. In making any forward planning these inputs should form essential ingredients. In our country they are at best peripheral largely because science and technology have not seeped into the planners' minds to the extent it should have. One still notices two cultures - with the scientific one kept in a closed box to be opened on some purely ceremonial occasions.

The status of science journalism today

Let us first consider the advanced countries of the West. Writing about science journalism in his book 'The Wisdom of Science', R. Hanbury Brown has moaned that "Although advances in science and technology have given us an unparalleled ability to communicate with one another by radio, television and vast quantities of print, these so-called 'media' are seldom used to tell us anything about science." .... He goes on to say: "As far as journalism is concerned, it would prefer science to go away; of the 1750 daily papers published in the USA only 50 employ full-time science writers. The reason is, of course, that the popular media prefer topics that are more sensational and entertaining, and so they avoid science; they do this not only because they think science will bore their customers stiff, but also because it is difficult to find people who can put it over to the public successfully. However, there is some light at end of the tunnel. In recent years there has been a marked increase in the number of programmes and semi-popular magazines devoted to science, particularly in the USA, which suggests that, maybe, the popular media have underestimated the market."

Compared to the West, the situation in India is even more dismal. As mentioned by Hanbury Brown, the 'market economy' operates here too. And so astrological forecasts appear regularly in our newspapers but 'science and technology' are touched if at all, only with a bargepole.

In a recent survey conducted by the Energy and Environment Group and the National Council for Science and Technology Communication (NCSTC) the fraction of

विज्ञान से पीछा छुड़ाना पसंद करेगी। अमरीका से प्रकाशित 1750 दैनिक समाचार पत्रों में से केवल 50 समाचार पत्रों ने पूर्णकालिक विज्ञान लेखक नियुक्त किए हैं। वास्तव में इसका कारण यह है कि लोकप्रिय मीडिया ऐसे विषयों को तरहीज देता है तो अधिक सनसनीखेज और मनोरंजक हों अतः वह विज्ञान को पसंद नहीं करते। वह ऐसा केवल इसलिए नहीं करते कि विज्ञान उनके ग्राहकों के लिए कठिन होगा बल्कि यह इसलिए भी है कि ऐसे लोगों पाना कठिन है जो जनता तक इसके सफलतापूर्वक पहुंचा सके। फिर भी इस अंधेरी सुरंग के अंतिम छोर पर आशा की एक किरण है। हाल के वर्षों में विशेषकर अमरीका में विज्ञान को समर्पित कार्यक्रमों और अल्प लोकप्रिय पत्रिकाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है जो यह प्रदर्शित करता है कि लोकप्रिय मीडिया ने बाजार का कम आकलन किया है'।"

पश्चिम की तुलना में भारत की स्थिति और भी अधिक निराशाजनक है। जैसा कि हैनबरी ब्राउन ने कहा है 'बाजार अर्थव्यवस्था' यहां भी कार्य करती है। इसीलिए ज्योतिष की भविष्यवाणियां समाचार पत्रों में रोज प्रकाशित होती हैं परंतु 'विज्ञान और प्रौद्योगिकी' को यदि स्थान देते भी हैं तो किसी पृष्ठ के अंतिम छोर पर।

ऊर्जा एवं पर्यावरण समूह और राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् एनसीएसटीसी द्वाराकिए गए हाल के एक सर्वेक्षण में राष्ट्रीय समाचारपत्रों जुलाई से दिसम्बर 1989 की 6 माह की अवधि मेंद्व में विज्ञान को जो स्थान दिया गया वह विज्ञापनों सहित कुल पठन सामग्री का 2.1 से 6.56 प्रतिशत तक ही है।

विज्ञान पर इन रिपोर्टों में भी यह ज्ञात नहीं है कि कितना विषय स्वदेशी मूल का है और कितना विदेशी स्रोतों से लिया गया है।

हमारे समाचार पत्रों में अनेक रिपोर्टें न्यूयार्क टाइम्स, दि नेचर – टाइम्स साइंस रिपोर्ट और पश्चिमी मीडिया के अन्य समाचारों या लेखों से ली जाती हैं।

वैज्ञानिक समाचारों के अपने स्रोत प्रदान करने के लिए राविप्रौसंप ने *'स्रोत'* पत्रिका शुरू की जो भारत में संकलित एवं तैयार की गई विज्ञान सामग्री को प्रकाशित करता है। यह परीक्षण 1988 में शुरू किया गया था और यह मासिक संसाधन पत्र के रूप में है। *अब साप्ताहिक तथा पत्रिका के रूपये मासिक*

इसमें अपना अंशदान करने के लिए समाचारपत्रों और रेडियो स्टेशनों आदि को आमंत्रित किया गया। जिन्होंने अंशदान किया उन्हें डाक सूची में रखा गया। इसमें वैज्ञानिक लेख दिए जाते हैं जिन्हें समाचार पत्रों में प्रकाशित किया जा सकता है और 'तैयार' रूप में होने के कारण स्रोतों का पता लगाने की सम्पादकों की कठिनाइयों को भी यह दूर करते हैं। इसकी क्या प्रतिक्रिया हुई?

एक दशक के बाद भी न्यूजलेटर की बिक्री उतनी बढ़ी नहीं जैसी कि आशा थी। इस उपेक्षा के मुख्य कारण निम्नलिखित थे ;समाचार पत्र सम्पादकों, मालिकों आदि से प्राप्त फीडबैक से

space devoted to science coverage in the national newspapers (over the 6-month period July-December 1989) was found to be in the range of 2.1 % to 6.56% of the total reading matter exclusive of advertisements.

Even in these reports on science it is not known how much was of indigenous origin and how much taken over from foreign sources.

Many reports in our newspapers come from the New York Times, the Nature - Times Science Reports, and other news items or articles in the western media.

To provide our own sources of scientific news, the RVPSP launched '*Srote*' - a publication that has science coverage compiled and prepared in India. This experiment was launched in 1988 and in the form of a monthly resource letter *(Now weekly with a monthly compilation as a magazine)*. Newspapers and radio stations, etc., were invited to subscribe. Those that did were put on the mailing list. It contains science items that could be published in newspapers, and being in 'ready made' form removed the editors' difficulties of locating sources. What was the response?

Even after over a decade, the newsletter has not picked up as expected. The reasons for the apathy were mainly as follows (as discerned from the feedbacks received from newspaper editors, proprietors, etc.).

First, being a monthly, the items intended to be rated from a 'news-value' point of view. Second, the articles were longer than what the newspapers would like to have. Further, some newspapers would have liked the articles 'jazzed up' to make them more exciting or dramatised if not sensational.

To get round these difficulties' *Srote* 'was made a weekly with shorter crisper articles. The total number of pages per month is still the same; but the response has not been much better. However, *'Srote'* editors point out that many clippings are used by newspapers, etc., without acknowledgment of source let alone the payment of the modest fee for it. Thus the extent of unauthorized use of *'Srote'* articles may even be larger.

The list of newspapers using the facility has over 100 names, but they are largely from the Hindi belt in the north.

In fact, science coverage in Hindi newspapers is claimed to be better than in the English ones. Whatever the present situation, the *'Srote'* experiment should be continued further in view of its impact.

प्राप्तद्ध पहली बात यह है कि मासिक पत्रिका होने के कारण इसकी विषय सामग्री का कोटि निर्धारण 'समाचार मूल्य' की दृष्टि से किया जाना है। दूसरा, लेख जो थे वह समाचार पत्रों की अपेक्षा अधिक लम्बे थे। इसके अलावा कुछ समाचार पत्र इन्हें अधिक उत्तेजक या नाटकीय बनाने के लिए भले ही सनसनीखेज न हों,अधिक रोचक और आकर्षक बनाना चाहते थे। इन कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए 'स्रोत' को छोटे सुस्पष्ट लेखों से साप्ताहिक बनाया गया। प्रति माह पृष्ठों की संख्या अभी भी वही है, परंतु प्रतिक्रिया अधिक बेहतर नहीं रही है। फिर भी 'स्रोत' के सम्पादकों ने बताया है कि एक सामान्य शुल्क के भुगतान की बात तो दूर रही स्रोत का आभार प्रकट किए बिना ही अनेक समाचार पत्र आदि इसकी अनेक कतरनों का उपयोग कर रहे हैं। इस प्रकार 'स्रोत' का अनधिकृत उपयोग इससे भी अधिक हो सकता है। इस सुविधा का उपयोग करने वाले समाचार पत्रों के नामों की सूची 100 से अधिक है परंतु वह अधिकांश उत्तर भारत के हिन्दी क्षेत्रों के हैं। वास्तव में हिन्दी समाचार पत्रों में अंग्रेजी समाचार पत्रों की तुलना में अधिक विज्ञान सामग्री देने का दावा किया जाता है। वर्तमान स्थिति जो भी हो, इसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए 'स्रोत' के परीक्षण को आगे जारी रखा जाना चाहिए। दूसरी आशाजनक स्थिति यह है कि विभिन्न भाषाओं के अग्रणी समाचारपत्रों द्वारा साइंस सप्लीमेंट्स का नियमित साप्ताहिक प्रकाशन किया जा रहा है। अद्यतन गतिविधियों पर लेखों, अपने कार्यों पर साक्षात्कारों या पाठकों के प्रश्नों के उत्तर देने में सहायता करने के द्वारा हमारे वैज्ञानिक अनेक प्रकार से प्रभावशाली योगदान दे सकते हैं ऐसा मैं समझता हूं।

निष्कर्ष

अंतिम बात को अच्छी तरह समझने की जरूरत है। आधुनिक समय में स्वयं वैज्ञानिक बड़ी सरकारी निधियों से सहायता पा रहे हैं अतः वह क्या कर रहे हैं उसके बारे में जनता को सूचित करना उनका दायित्व है। अलग थलग अपनी ही दुनिया में रहने से वह लोगों की इस धारणा को और पक्का करेंगे कि विज्ञान एक विलासिता है जिसे वह वहन नहीं कर सकते। बल्कि वास्तविकता इसके विपरीत है, विज्ञान वह चीज है जिसे हम छोड़ नहीं सकते या दूसरों पर नहीं छोड़ सकते। मैंने पहले ही सशक्त अनुशंसा की है कि समाज को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के बारे में अच्छी जानकारी की क्यों जरूरत है।देश के विकास के बारे में सही निर्णय लेने, तेजी से बढ़ रहे विज्ञान और प्रौद्योगिकी के नियंत्रित उपयोग के बारे में सही कार्यनीति लागू करने और वैज्ञानिक सृजनशीलता के सम्पोशण के लिए वैज्ञानिकों को एक संगठन के रूप में महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में जनता को अच्छी जानकारी देनी होगी।मीडिया को भी इस अभियान में वैज्ञानिकों की सहायता करनी चाहिए। परेशानी के समय में सूचना एवं सलाह प्रदान करने में समाचार पत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका है। विज्ञान के वर्तमान युग में उन्हें विज्ञान पत्रकारिता को एक शांत रुके हुए जल की तरह नहीं समझना चाहिए। उन्हें इसे एक महासागर की तरह देखना चाहिए जो उन तरंगों और ज्वार भाटा से परिपूर्ण *है जो हमारे जीवन का*

Another silver lining is the regular weekly publication of science supplements by leading newspapers in different languages.

Here I feel our scientists can contribute effectively in many ways - by writing articles on the latest developments, by giving interviews on their work or even by helping out in answering readers' queries.

Concluding remarks

This last point needs to be underscored heavily. In modern times the scientists themselves, with the large public funds supporting them, owe it to the public to inform them on what they are doing. By remaining in their ivory towers they will only help foster a growing feeling that science is a luxury that we cannot afford.

Rather, it is the other way round! Science is something that we cannot afford to abandon or leave to others. I have already pleaded strongly why the society needs to be well informed about science and technology.

To make the correct decisions about the country's development, to employ the right strategy with regard to the controlled use of the rapidly growing science and technology and to nurture the vital spark of scientific creativity, the scientists as a body have to keep the public well informed about the vital issues.

And the media should help scientists in this crusade. Newspapers play a vital role in spreading information and opinion in times of stress.

In the present age of science they should not treat science journalism as quiet backwaters. They should look upon it as an ocean vibrant with waves and tides that affect our destiny.

Author: Dr. Jayant V. Narlikar, Director (Retired), Inter-University Centre for Astronomy and Astrophysics, Ganesh Khind, Pune - 411 007. He is the recipient of the UNESCO Kalinga Award for Science popularizations *1999.*

(Courtesy: Indian Journal of Science Communication, New Delhi January-June 2002)

...Back-Index